खण्ड-10, अंक-1, वर्ष-2022, पृ0सं0 190-194
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v10i1.34
SJIF (2021) : 7.247

Geometry in Shulba Sutra

Rama Jain
Department of Mathematics, Mahila Vidyalaya Degree College, Lucknow-226 018, U.P., India
ramajain26@yahoo.com

Received: 31-08-2022, Accepted: 20-09-2022

Abstract- In this paper, a method to find square roots of numerical values, as described in 600 B.C. by Vedic Sutra Texts are contained in a Vedic Collection, Shrauta Sutra, which are basically precise directives of Vedic Rituals.

Key Words- Shulba Sutra, Baudhayan, Katyayan, Shrauta Sutra

शुल्बसूत्र में ज्यामिति

रमा जैन
गणित विभाग, महिला विद्यालय डिग्री कॉलेज, लखनऊ–226 018, उ0प्र0, भारत
ramajain26@yahoo.com

सार– प्रस्तुत प्रपत्र में वैदिक हिन्दू विद्वानों द्वारा 600 ई0 पू0 संस्कृत में रचित शुल्बसूत्रो से प्रेरित संख्यमानों के वर्गमूल निकालने की विधि के बारे में चर्चा की जाएगी। शुल्बसूत्र पाठ्य श्रौतसूत्र वैदिक ग्रंथ के अन्तर्गत हैं। जो वस्तुतः वैदिक कर्मकाण्ड का कल्प विधान है।

बीज शब्द– शुल्बसूत्र, बौद्धायन, कात्यायन, श्रौतसूत्र

1. **परिचय**– शुल्बसूत्र मुख्यतः वैदिक परिशिष्ट हैं। जो वेदियों को बनाने का नियम प्रदान करते हैं। प्राचीन काल में ऐसी धारणा थी कि यदि धार्मिक अनुष्ठान की सफलता सुनिश्चित करनी हैं तो वेदियों की नाप–जोख (आकार इत्यादि) एकदम सटीक होनी चाहिए।

2. **शुल्बसूत्र का अर्थ**– (संस्कृतः शुल्ब अर्थात् नापने की रस्सी) शुल्बसूत्र वे हैं जो धार्मिक क्रियाकलापों के लिए आवश्यक क्षेत्र के निर्माण के लिए ज्यामितीय गणना की विधि बताते हैं। शुल्बसूत्र, श्रौतसूत्र पाठ्य के अन्तर्गत आते हैं। श्रौतसूत्र के अन्तर्गत, हवन, यज्ञ, इष्टियाँ, एवं सत्र प्रकल्पित हैं। श्रौतसूत्र के उन्हीं वेद विहित कर्मों का अनुष्ठान करते हैं जो श्रौत अग्नि पर आहित अग्नि द्वारा अनुषटहेय हैं। यह सबसे प्राचीन व्यावहारिक ज्यामितीय गणित है।

चार मुख्य शुल्बसूत्र जो गणितीय रूप से ज्यादा महत्वपूर्ण हैं, वे हैं–बौद्धायन, मालवा, आपसतम्ब एवं कात्यायन द्वारा संकलित शुल्बसूत्र। इनमें से सबसे प्राचीन शुल्वसूत्र 600 ई0 पू0 बौद्धायन द्वारा निष्पादित थे। बौद्धायन शुल्बसूत्र के कुछ मुख्य सूत्र हम यहाँ पर उद्धरत कर रहे हैं।

3. **सूत्र संख्या 48 का कथन है कि**– "एक आयत का विकर्ण स्वतः उन दोनों क्षेत्रफल को संयुक्त रूप से निरूपित करता है जो आयत की दोनों भुजायें अलग–अलग वर्ग के रूप मे निरूपित करती हैं।"

सूत्र संख्या 50– में वर्णन है कि दो वर्गों के क्षेत्रफल के बराबर वर्ग की रचना कैसे करें । **चित्र–1 एवं 2**।

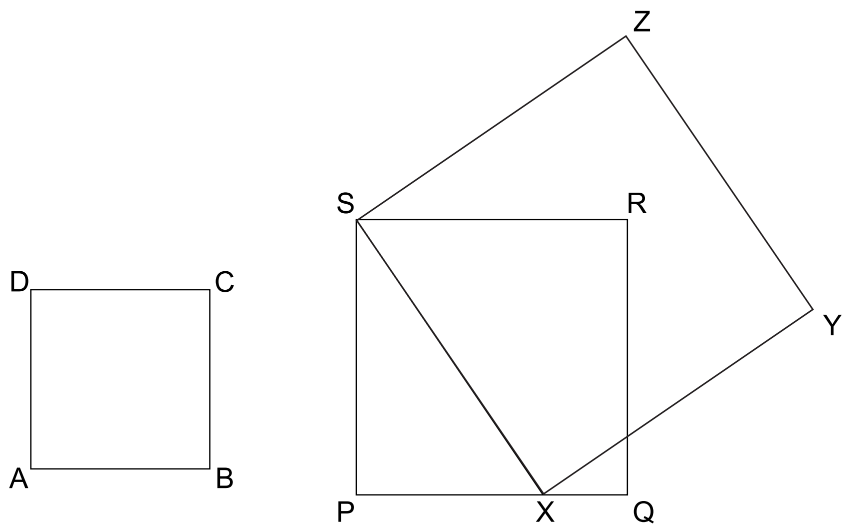

चित्र सं0 (1)

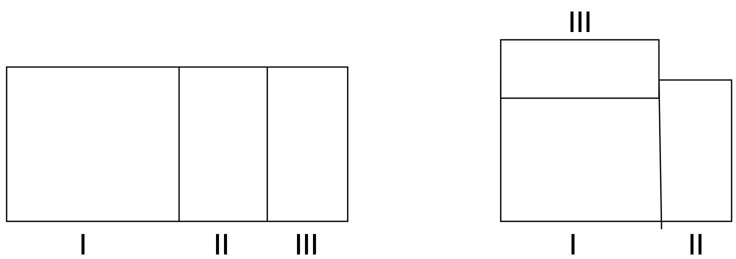

चित्र सं0 (2)

सूत्र संख्या 51 में बताया गया है की दो वर्गों के क्षेत्रफल के अंतर के बराबर वर्ग की रचना कैसे करें।

4. **बौद्धायन शुल्बसूत्र की सूत्र संख्या 52**– इस सूत्र के द्वारा यह विदित होता है की एक वर्ग का विकर्ण, किसी दूसरे वर्ग, जो कि क्षेत्रफल में पहले वर्ग का दोगुना है, की एक भुजा है।
यदि हम मूलवर्ग की भुजा कोई मान लें, तो विकर्ण विकर्ण दोगुने क्षेत्रफल वाले वर्ग की एक भुजा अर्थात साधारणतः 2 का वर्गमूल या $\sqrt{(2)}$ होगा। संस्कृत में इस लंबाई के लिए ″द्विकर्णी″ शब्द प्रयुक्त होता है जिसका शाब्दिक अर्थ है :–″वह जो 2 को उत्पन्न करता है।″

शुल्बसूत्र में एक वर्ग के विकर्ण की लंबाई प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित निर्धारण निहित हैंः–

″एक भुजा की लंबाई में इसकी तिहाई की वृद्धि करिए और फिर उस तिहाई में इसकी चौथाई की वृद्धि एवं उसके चौतीसवें भाग की कमी करिए।''

इस प्रकार, शुल्बसूत्र द्वारा निर्धारित लगभग मान है।

$$\sqrt{2} \cong 1 + \frac{1}{3} + \frac{1}{4} \cdot \frac{1}{3} - \frac{1}{34} \cdot \frac{1}{4} \cdot \frac{1}{3} \approx \frac{577}{408} = \frac{1154}{816}$$

जिसका लगभग मान है–

$\sqrt{2} \cong$ **1.4142156**

और कैलक्यूलेटर के अनुसार–

$\sqrt{2} \cong$ **1.4142136**

अब प्रश्न यह उठता है कि वैदिक हिन्दू विद्वानों ने किस प्रकार इतना शुद्ध सांख्य मान प्राप्त किया। दुर्भाग्य से, ऐसे न के बराबर दस्तावेज़ उपलब्ध हैं जिससे हम इसके बढ़े हुए मान तक पहुँच पाएं। बौधायन के शुल्बसूत्र संख्या 54 में दिए गए आयत के क्षेत्रफल के बराबर क्षेत्रफल वाले वर्ग की ज्यामितीय रचना करने की विधि का वर्णन है। यदि N कोई संख्या है तो भुजाओं N एवं 1 वाले एक आयत के क्षेत्रफल के समान उस वर्ग का क्षेत्रफल होगा जिसकी एक भुजा N का वर्गमूल हो।

5. **इस प्रकार सूत्र 54**– N के वर्गमूल की भुजा की भुजा वाले एक वर्ग की रचना की विधि प्रदान करता है। अतः ये N का वर्गमूल प्राप्त करने में सहायक है। बौधायन की ज्यामितीय प्रक्रिया के प्रथम चरण के अनुसार–

"यदि हम एक आयत को एक वर्ग में बदलना चाहते हैं तो आयत की छोटी भुजा पर एक वर्ग बना लें तथा शेष बचे भाग को दो बराबर भागों में बाँट लें। इन दोनों भागों को वर्ग की संलग्नक भुजा से जोड़ दें।"

यह प्रक्रिया दिए हुए आयत को एक बड़े वर्ग, जिसके एक कोने पर एक छोटा वर्ग कटा हुआ है, में बदलती है।

सूत्र 48 वह स्पष्ट कथन है जिसको बाद में पाइथागोरस की प्रमेय कहा गया। इसके अतिरिक्त बौधायन ने निम्नलिखित पूर्णाङ्क भुजाओं और आयत के विकर्णों की सूची प्रदत्त की है जिसे हम आजकल € पाइथागोरस की तिकड़ी (ट्रिप्लेस्) के नाम से जानते हैं। जैसे (3,4,5), (5,12,13), (7,24,25), (8,15,7), (12,35,37) आदि।

ये शुल्बसूत्र में समकोण की रचना करने की विभिन्न विधियों में प्रयुक्त होती हैं।

6. **के वर्गमूल के बढ़े हुए भाग की रचना करना**– यदि हम इकाई के दो वर्गों को संयुक्त करने के लिए सूत्र 54 का प्रयोग (3a) करें तो हमें $1\frac{1}{2}$ इकाई का एक वर्ग हटाया हुआ है। अब हम बड़े वर्ग के नीचे की तरफ से व बाईं तरफ से 6 पतली पट्टियाँ काटेंगे जो हटाए हुए ½ इकाई के छोटे वर्ग को पूर्ण करने में प्रयुक्त होगी।

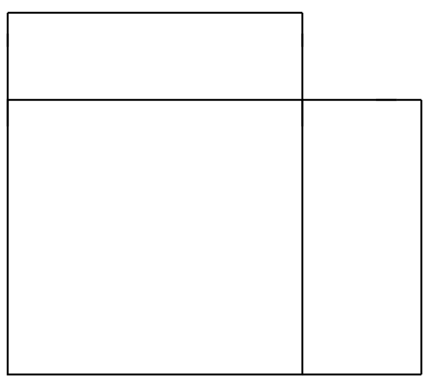

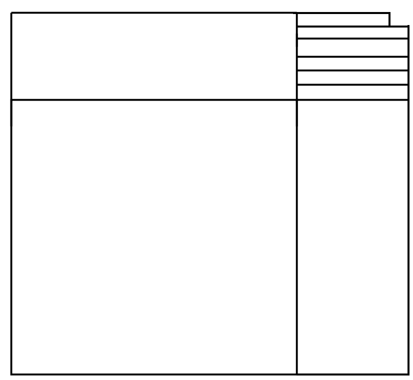

चित्र सं0 (3)

हम आसानी से देख सकते हैं कि अभी भी ऊपर के दायें कोने पर एक छोटा वर्ग शेष है क्योंकि नीचे के बाएं कोने पर पतली पट्टियां एक दूसरे को ढक रही हैं।

$(1 + \frac{1}{2} - \frac{1}{6} \cdot \frac{1}{2})$ इकाई $= (1 + \frac{5}{12})$ इकाई $= (1 + \frac{1}{3} + \frac{1}{4} \cdot \frac{1}{3})$ इकाई

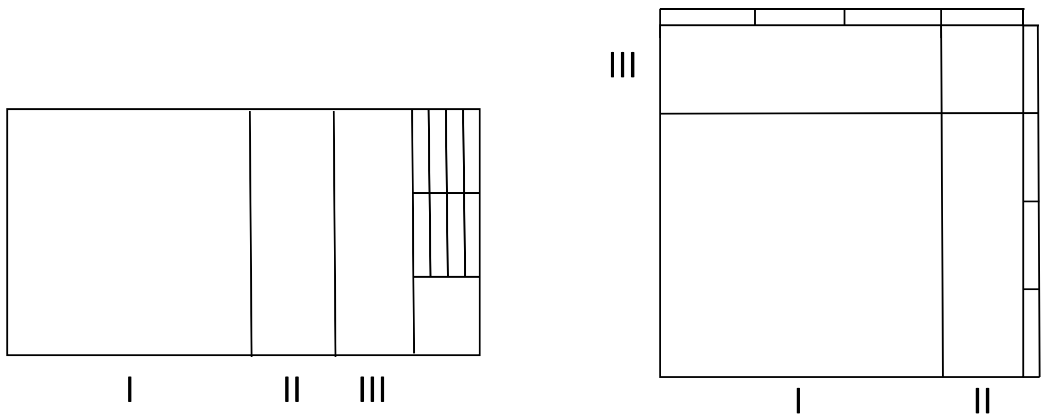

चित्र सं०–4

अब हमारे पास दो वर्ग इकाई हैं जो एक बड़े वर्ग, जिसमें से एक छोटा वर्ग हटाया गया है, के बराबर है। बड़ेवर्ग की भुजा एक इकाई धन $\frac{1}{3}$ इकाई धन का $\frac{1}{4}$ इकाई के बराबर है और छोटे वर्ग की भुजा $\frac{1}{12}$ इकाई है। इस छोटे वर्ग को भरने के लिए हम एकल वर्ग की नीचे की एवं बाईं भुजाओं से पतली पट्टियां काटने का प्रयास करेंगे। क्योंकि इन दो पतली पत्तियों की लंबाई $(1+\frac{5}{12})$ इकाई या $\frac{17}{12}$ इकाई है तो हम प्रत्येक को $\frac{1}{12}$ इकाई लंबाई के 17 टुकड़ों में काटेंगे। यदि ये खड़ी स्थिति में जोड़ दिए जाएँ तो ये छोटे वर्ग को भर देंगे, यदि पट्टियों की चौड़ाई $\frac{1}{12}$ इकाई का $\frac{1}{34}$वां भाग है । अतः हम आसानी से देख सकते हैं कि इकाई क्षेत्रफल के दो वर्ग $(1+\frac{1}{3}+\frac{1}{4}\cdot\frac{1}{3}-\frac{1}{34}\cdot\frac{1}{4}\cdot\frac{1}{3})$ इकाई की भुजा वाले वर्ग के क्षेत्रफल के बराबर होगी। लेकिन यदि हम सूक्ष्मता से देखे तो पाते हैं कि नीचे के बाएं कोने पर पट्टियां एक दूसरे को ढकती हैं। और इस प्रकार $(\frac{1}{34}\cdot\frac{1}{4}\cdot\frac{1}{3})$ भुजा का एक छोटा वर्ग फिर भी शेष रहता है। इस प्रकार $(1+\frac{1}{3}+\frac{1}{4}\cdot\frac{1}{3}-\frac{1}{34}\cdot\frac{1}{4}\cdot\frac{1}{3})$ अब भी छोटी सी वृद्धि पर है। उपर्युक्त विधि को बार–बार प्रयोग करके हम अधिक से अधिक शुद्धता प्राप्त कर सकते हैं।

क्योंकि $2\,[34\,(17) - 1] = 1154$

अतः $\sqrt{2} \cong 1+\frac{1}{3}+\frac{1}{4}\cdot\frac{1}{3}-\frac{1}{34}\cdot\frac{1}{4}\cdot\frac{1}{3}-\frac{1}{1154}\cdot\frac{1}{34}\cdot\frac{1}{4}\cdot\frac{1}{3}$

यह विधि किसी भी संख्या के लिए प्रयुक्त की जा सकती है। सर्वप्रथम हम संख्या को दो वर्गों के क्षेत्रफल के अंतर से निरूपित करते हैं जैसे $N.1 = A^2 - B^2$ जहां भुजा A भुजा B की पूर्णाङ्क गुणन है। उदाहरणतः

$$5.1 = (2+\tfrac{1}{4})^2 - (\tfrac{1}{4})^2$$

$$2+\tfrac{1}{2} = (1+\tfrac{1}{2}+\tfrac{1}{6}\cdot\tfrac{1}{2})^2 - (\tfrac{1}{6}\cdot\tfrac{1}{2})^2$$

इसकी सत्यता देखने का सबसे आसान तरीका यह है कि इनको ज्यामितीय विधि से निरूपित किया जाए जैसा कि बौधायन के लिए भी प्राकृतिक तरीका था।

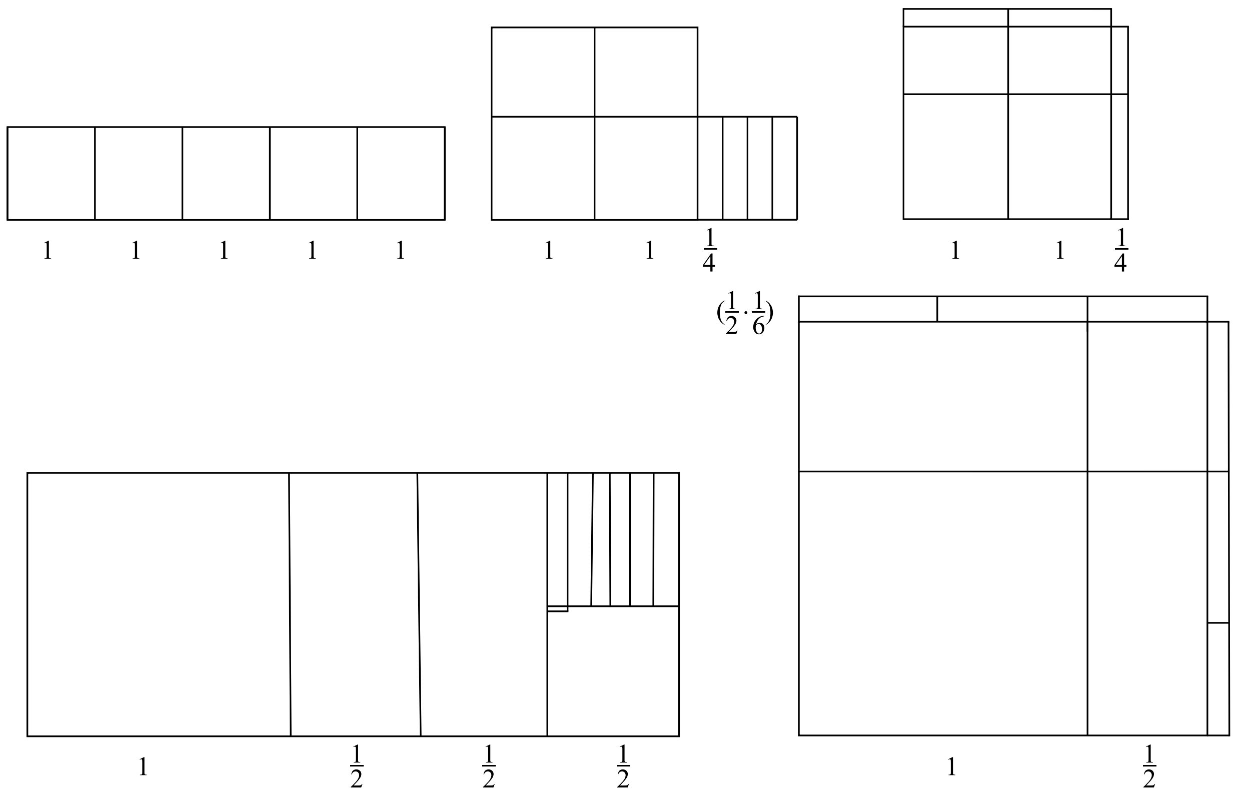

चित्र सं0(5)

7. **निष्कर्ष**– शुल्बसूत्रों में बहुत सी शक्तिशाली तकनीकें निहित हैं जो कि विशिष्ट अवस्थाओं में ऐसी शक्ति एवं निपुणता से भरपूर हैं, जिसका कि अधिकांश सामान्य तकनीकों में अभाव है। ये विधियाँ बहुत सी संख्याओं के लिए वांछित शुद्धता के साथ लागू होती है। यह आधुनिक भाज्य एवं औसत विधि से काम गणना व समय लेती है। संभवतः हम विश्व के प्रथम प्रायोगिक ज्यामितीय पाठ्य से कुछ सीख लेने में सक्षम होंगे। और ज्यामितीय एवं संख्यात्मक तकनीकों को कंप्यूटर प्रणाली से जोड़ने में सफल होंगे।

References

1. Joseph, G.(1991) The Crest of the Peacock, I. B. Taurus, London.
2. Seidenberg,A.(1961) The Ritual origin of Geometry, Archive for the History of Exact Sciences, vol. 1, p.p. 488-527.
3. Turner's,P. R. (1991)Will the 'Real' Real Arithmetic Please Stand Up?, Part 34, pp. 298-304.
4. Baudhayan, ShulvaSutram, pp. 61-62.
5. Datta, B. (1932) The Science of Shulva,University of Calcutta, pp. 196-202.